IJAER/ March-April 2020/Volume-9/Issue-5 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

प्राचीन भारतीय कला और विज्ञान

दीपक बहुगुणा
शोधार्थी इतिहास विभाग.
विनोवा भावे विश्वविद्यालय हजारीबाग झारखण्ड

सार

प्रागैतिहासिक शैल–चित्र भारत में अनेक स्थानों पर पाए जाते हैं। इनके कुछ महत्वपूर्ण उल्लेखनीय स्थल हैं भोपाल के पास स्थित भीमबेटका की गुफाएँ, उत्तर प्रदेश में स्थित मिर्जापुर की पहाड़ियाँ और कर्नाटक के बेल्लारी जिले की पहाड़ियाँ। भीमबेटका के शैल–चित्र चट्टानी आश्रय–स्थलों पर उत्कीर्णित और चित्रित किए गए हैं। आकृतियाँ साधारण रेखाओं के रूप में प्रस्तुत की गईं हैं। उन्हें सक्रिय रूप में यानी कोई क्रिया करते हुए दर्शाया गया है, उनके हाथ–पैर इकहरी रेखाओं से बनाए गए हैं। इन शैलाश्रयों में अधिकतर शिकार और नृत्य की क्रियाओं के दृश्य प्रस्तुत किए गए हैं। भीमबेटका का समय मध्य पाषाण काल (मेसोलिथिक पीरियड) यानी 11,000–3000 ई.पू. माना जाता है। ये चित्र, रेखाओं का सम्यक् प्रयोग करते हुए, दृश्यों को चित्र रूप में प्रस्तुत करने की मानवीय आकांक्षा के द्योतक हैं।

मुख्यशब्द *प्राचीन , भारतीय , कला , विज्ञान*

प्रस्तावना

प्रागैतिहासिक शैल– चित्र

अत्यंत प्राचीन अतीत यानी बीते हुए काल को, जिसके लिए न तो कोई पुस्तक और न ही कोई लिखित दस्तावेज़ उपलब्ध है, उसे प्राक् इतिहास (Pre-history) कहा जाता है। पुस्तकें या दस्तावेज़ उपलब्ध होते भी कैसे? उस समय न तो कागज़ था, न ही कोई भाषा या लिखित शब्द। प्राक् इतिहास को हम अक्सर प्रागैतिहासिक काल (Pre-historic time) कहते हैं। ऐसी परिस्थिति में मनुष्य कैसे रहता होगा, यह विश्वास करना तब तक बहुत कठिन बना रहा, जब तक कि विद्वानों ने उन स्थानों को खोजना शुरू नहीं कर दिया, जहाँ प्रागैतिहासिक काल के मनुष्य रहा करते थे। ऐसे स्थलों की खुदाई से पुराने औज़ारों, मिट्टी के बर्तनों, आवास स्थलों और उस काल के मनुष्यों तथा जानवरों की हड्डियों के अवशेष मिले हैं।

इन चीज़ों से प्राप्त जानकारियों को और तत्कालीन मनुष्यों द्वारा गुफाओं की दीवारों पर खींची गई आकृतियों को एक साथ जोड़कर, विद्वानों ने एक अच्छा–खासा विवरण तैयार किया है। इससे यह जाना जा सकता है कि उस समय क्या होता था और प्रागैतिहासिक काल में मनुष्य किस प्रकार रहा करते थे। जब मनुष्यों की खाना, पानी, कपड़ा तथा आवास संबंधी बुनियादी ज़रूरतें पूरी होने लगीं तो वे अपने विचारों तथा मनोभावों को अभिव्यक्त करने का भी प्रयास करने लगे। इसके लिए उन्होंने

गुफाओं की दीवारों को आधार बनाकर चित्र और रेखाचित्र बनाने शरू कर दिए और उनके माध्यम से अपने आपको यानी अपने भावों तथा विचारों को अभिव्यक्त करने लगे। प्रागैतिहासिक काल के मानव ने इन चित्रों को क्यों खींचा? शायद उस समय के मनुष्यों ने अपने घरों को अधिक रंगीन और सुंदर बनाने के लिए ये भित्ति–चित्र बनाए अथवा यह भी हो सकता है कि उन्होंने अपने रोजमर्रा के जीवन का दृश्य–अभिलेख रखने के लिए ये चित्र खींचे, जैसे कि आजकल हम में से कुछ लोग अपनी डायरी लिखते हैं।

उत्तर पुरापाषाण युग (अपर पैलिओलिथिक पीरियड)

उत्तर पुरापाषाण युग के चित्र हरी और गहरी लाल रेखाओं से बनाए गए हैं। इनमें से कुछ छड़ी जैसी पतली मानव आकृतियाँ हैं लेकिन अधिकांश चित्र बड़े–बड़े जानवरों, जैसेभैंसों, हाथियों, बाघों, गैंडों और सूअरों के हैं। कुछ चित्र धवन चित्र (wash paintings) हैं। लेकिन अधिकांश चित्र ज्यामितीय आकृतियों से भरे हुए हैं। ऐसे चित्रों का शिकारियों से कोई संबंध नहीं दिखाया गया है। हरे चित्र नर्तकों के और लाल चित्र शिकारियों के हैं।

शिकार का दृश्य

मध्यपाषाण युग के चित्रों में शिकार के दृश्य बहुलता में पाए जाते हैं। यह ऐसा ही एक दृश्य है जिसमें लोगों का एक समूह भैंसे को मारते हुए दिखाया गया है। कुछ घायल व्यक्तियों को इधर–उधर पड़ा दर्शाया गया है। ये चित्र अंकन की कला में श्रेष्ठता का प्रदर्शन करते हैं।

अध्ययन के उद्देश्य

1. सिंधु घाटी सभ्यता की उत्पत्ति का अध्ययन
2. प्रागैतिहासिक शैल–चित्र का अध्ययन

सिंधु घाटी सभ्यता की उत्पत्ति

सिंधु सभ्यता की उत्पत्ति पुरातत्वविदों और इतिहासकारों के लिए एक रहस्य है। यह एक पहेली है जो अभी भी कुछ टुकड़ों को याद करती है क्योंकि सभ्यता की उत्पत्ति की तारीख अभी भी अज्ञात है। कृषि और पशु–पालन के शुरुआती विकास का पता 6500 ईसा पूर्व में लगाया गया है। 2600 ईसा पूर्व से पहले के देशों के गांव न केवल सिंधु मैदानों पर बल्कि बलूचिस्तान के पहाड़ों के बीच नदी घाटियों में भी पाए जाते थे, सिंधु सभ्यता के साथ प्रमुख समस्याओं में से एक इसकी लिपि है। एकमात्र स्रोत जिसके माध्यम से हम सिंधु सभ्यता के बारे में जान सकते हैं, वे पुरातात्विक कलाकृतियाँ हैं, मुख्यतः क्योंकि लिपि को अभी तक समझा नहीं गया है। हालाँकि, कुछ इतिहासकारों ने इसे समझने का दावा किया है और इसे चित्रलेखों और कंप्यूटर भाषाओं के साथ मिला दिया है, कुछ ने इसकी तुलना अन्य बोली जाने वाली समकालीन भाषाओं से की है।

पत्थर की मूर्तियाँ

हड़प्पाई स्थलों पर पाई गईं मूर्तियाँ, भले ही वे पत्थर, कांसे या मिट्टी की बनी हों, संख्या की दृष्टि से बहुत अधिक नहीं हैं पर कला की दृष्टि से उच्च कोटि की हैं। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में पाई गईं पत्थर की मूर्तियाँ त्रि–आयामी वस्तुएं बनाने का उत्कृष्ट उदाहरण हैं। पत्थर की मूर्तियों में दो पुरुष प्रतिमाएं बहुचर्चित हैं, जिनमें से एक पुरुष धड़ है, जो लाल चूना पत्थर का बना है और दूसरी दादी वाले पुरुष की आवक्ष मूर्ति है, जो सेलखड़ी की बनी है। दाढ़ी वाले पुरुष को एक धार्मिक व्यक्ति माना जाता है। इस आवक्ष मूर्ति को शॉल ओढ़े हुए दिखाया गया है। शॉल बाएं कंधे के ऊपर से और दाहिनी भुजा के नीचे से डाली गई है। शॉल त्रिफुलिया नमूनों से सजी हुई है।

आँखें कुछ लंबी और आधी बंद दिखाई गई हैं, मानों वह पुरुष ध्यानावस्थित हो। नाक सुंदर बनी हुई है और होंठ कुछ आगे निकले हुए हैं जिनके बीच की रेखा गहरी है। दाढ़ी–मूंछ और गलमुच्छे चेहरे पर उभरी हुई दिखाई गई हैं। कान सीप जैसे दिखाई देते हैं और उनके बीच में छेद हैं। बालों को बीच की मांग के द्वारा दो हिस्सों में बाँटा गया है और सिर के चारों ओर एक सादा बना हुआ फीता बंधा हुआ दिखाया गया है। दाहिनी भुजा पर एक बाजूबंद है और गर्दन के चारों ओर छोटे–छोटे छेद बने हैं जिससे लगता है कि वह हार पहने हुए है।

कांसे की ढलाई

हड़प्पा के लोग कांसे की ढलाई बड़े पैमाने पर करते थे और इस काम में प्रवीण थे। इनकी कांस्य मूर्तियाँ कांसे को ढालकर बनाई जाती थीं। इस तकनीक के अंतर्गत सर्वप्रथम मोम की एक प्रतिमा या मूर्ति बनाई जाती थी। इसे चिकनी मिट्टी से पूरी तरह लीपकर सूखने के लिए छोड़ दिया जाता था। जब वह पूरी तरह सूख जाती थी तो उसे गर्म किया जाता था और उसके मिट्टी के आवरण में एक छोटा सा छेद बनाकर उस छेद के रास्ते सारा पिघला हुआ मोम बाहर निकाल दिया

जाता था। इसके बाद चिकनी मिट्टी के खाली सांचे में उसी छेद के रास्ते पिघली हुई धातु भर दी जाती थी। जब वह धातु ठंडी होकर ठोस हो जाती थी तो चिकनी मिट्टी के आवरण को हटा दिया जाता था। कांस्य में मनुष्यों और जानवरों दोनों की ही मूर्तियाँ बनाई गई हैं। मानव मूर्तियों का सर्वोत्तम नमूना है एक लड़की की मूर्ति, जिसे नर्तकी के रूप में जाना जाता है। कांसे की बनी हुई जानवरों की मूर्तियों में भैंस और बकरी की मूर्तियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भैंस का सिर और कमर ऊँची उठी हुई है तथा सींग फैले हुए हैं। सिंधु सभ्यता के सभी केंद्रों में कांसे की ढलाई का काम बहुतायत में होता था। लोथल में पाया गया तांबे का कुत्ता और पक्षी तथा कालीबंगा में पाई गई साँड़ की कांस्य मूर्ति को हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में पाई गई ताँबे और कांसे की मानव मूर्तियों से किसी प्रकार भी कमतर नहीं कहा जा सकता।

मिट्टी से बनी आकृति

भारतीय कला की विशेषताएँ

(१) प्राचीनता रू भारतीय कला का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। भारतीय चित्रकारी के प्रारंभिक उदाहरण प्रागैतिहासिक काल के हैं, जब मानव गुफाओं की दीवारों पर चित्रकारी किया करता था। भीमबेटका की गुफाओं में की गई चित्रकारी ५५०० ई.पू. से भी ज्यादा पुरानी है। ७वीं शताब्दी में अजंता और एलोरा गुफाओं की चित्रकारी भारतीय चित्रकारी का सर्वोत्तम उदाहरण हैं। प्रागतिहासिक काल में भारतीयों ने जंगली जानवरों बारहसिंघा, भालू, हाथी आदि के चित्र बनाना सीख लिया था।

(२) भारतीय कला श्संस्कृति प्रधानश होने से श्धर्मप्रधानश हो गयी है। वास्तव में धर्म ही भारतीय कला का प्राण है। भारतीय कला धार्मिक एवं आध्यात्मिक भावनाओं से सदा अनुप्राणित रही है। किन्तु भारतीय कलाकारों ने प्रत्येक युग में श्धार्मिक कृतियोंश के साथ–साथ लौकिक एवं धर्मेतर कृतियों का भी सृजन किया है क्योंकि भारतीय सामाजिक जीवन में इन्हें भी समान रूप से महत्त्व दिया गया था। अतः भारतीय कला को श्सामान्य जीवन की सच्ची दिग्दर्शिकाश भी कहा जा सकता है।

भारतीय चित्रकारी में भारतीय संस्कृति की भांति ही प्राचीनकाल से लेकर आज तक एक विशेष प्रकार की एकता के दर्शन होते हैं। प्राचीन व मध्यकाल के दौरान भारतीय चित्रकारी मुख्य रूप से धार्मिक भावना से प्रेरित थी, लेकिन आधुनिक काल तक आते–आते यह काफी हद तक लौकिक जीवन का निरुपण करती है। आज भारतीय चित्रकारी लोकजीवन के विषय उठाकर उन्हें मूर्त कर रही है।

(३) अनामिकता रू प्राचीन शिल्पियों और स्थापतियों ने अपना नाम और परिचय अधिकांशतः गुप्त रखा क्योंकि सृजनकर्ता के बजाय सृजन का महत्त्व दिया जाता था। इस कारण अधिकांश कलाकृतियाँ श्अनामश् हैं।

(४) भारतीय कला शाश्वत सत्य का प्रतीक है क्योंकि श्सत्यं शिवं सुन्दरम्श् की भावना से युक्त होने के कारण उसमें नित्य नवीनता दिखती है– क्षणे क्षणे यद् नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः (जो क्षण–क्षण नवीन होता रहे, यही रमणीयता है।)

(५) परम्परा रू भारतीय कला में परम्परा का सर्वत्र सम्मान हुआ है किन्तु किसी भी काल में अन्धानुकरण को प्रश्रय नहीं दिया गया।

(६) भारतीय कला में वाह्य सौन्दर्य के साथ–साथ आन्तरिक सौन्दर्य के भाव की प्रधानता है।

(७) प्रतीकात्मकता रू भारतीय कला की अन्य विशेषताओं में प्रतीकात्मकता का भी महत्वपूर्ण स्थान रहा है। कला के माध्यम से सूक्ष्म धार्मिक एवं दार्शनिक भावों को श्स्थूलरूपश प्रदान करके जनसामान्य के लिये सरस, सरल और सुग्राह्य बनाया गया है।

(८) भारतीय कला भारतीय संस्कृति की संवाहिका है।

द्रविड़ या दक्षिण भारतीय मंदिर शैली

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, नागर शैली के मंदिर आमतौर पर ऊँची कुर्सी (प्लिंथ) पर बनाए जाते हैं, इसके विपरीत द्रविड़ मंदिर चारों ओर एक चहारदीवारी से घिरा होता है। इस चहारदीवारी के बीच में प्रवेश द्वार होते हैं जिन्हें गोपुरम् कहते हैं। मंदिर के गुम्बद का रूप जिसे तमिलनाडु में विमान कहा जाता है, मुख्यतरू एक सीढ़ीदार पिरामिड की तरह होता है जो ऊपर की ओर ज्यामितीय रूप से उठा होता है, न कि उत्तर भारत के मंदिरों की तरह मोड़दार शिखर के रूप में दक्षिण भारतीय मंदिरों में, शिखर शब्द का प्रयोग मंदिर की चोटी पर स्थित मुकुट जैसे तत्व के लिए किया जाता है जिसकी शक्ल आमतौर पर एक छोटी स्तूपिका या एक अष्टभुजी गुमटी जैसी होती है। यह उस क्षेत्र के बराबर होती है जहाँ उत्तर भारतीय मंदिरों में एक आमलक या कलश होता है। उत्तर भारत के मंदिर के गर्भगृह के प्रवेश द्वार के पास मिथुनों या गंगा–यमुना नदी की प्रतिमाएँ होती हैं, दक्षिण भारतीय मंदिरों में आमतौर पर भयानक द्वारपालों की प्रतिमाएँ खड़ी की जाती हैं जो मानों मंदिर की रक्षा कर रहे हों। मंदिर के अहाते (परिसर) में कोई बड़ा जलाशय या तालाब होता है।

उप–देवालयों को या तो मंदिर के मुख्य गुम्बद के भीतर ही शामिल कर लिया जाता है या फिर अलग छोटे देवालयों के रूप में मुख्य मंदिर के पास रखा जाता है। दक्षिण के मंदिरों में उत्तर भारत के मंदिरों की तरह एक–साथ कई छोटे–बड़े शिखर नहीं होते। दक्षिण के सबसे पवित्र माने जाने वाले कुछ मंदिरों में आप देखेंगे कि मुख्य मंदिर, जिसमें गर्भगृह बना होता है, उसका गुम्बद सबसे छोटा होता है। इसका कारण यह है कि वह मंदिर का सबसे पुराना भाग होता है और समय के साथ जब नगर की जनसंख्या और आकार बढ़ जाता है तो मंदिर भी बड़ा हो जाता है और उसके चारों ओर नई चहारदीवारी बनाने की भी ज़रूरत पड़ जाती है। इसकी ऊँचाई इससे पहले वाली दीवार से ज्यादा होगी और उसका गोपुरम् भी पहले वाले गोपुरम से अधिक ऊँचा होगा। उदाहरण के लिए यदि आप त्रिची (आधुनिक त्रिचिरापल्ली) के श्रीरंगम मंदिर के दर्शन करने जाएँ तो आप पाएंगे कि इसके चार समकेंद्रिक आयताकार अहाते (चहारदीवारियाँ) हैं और हर चहारदीवारी में एक गोपुरम् बना है। सबसे बाहर की चहारदीवारी सबसे नई है और एकदम बीच का गुम्बद जिसमें गर्भगृह बना है, सबसे पुराना है। इस प्रकार मंदिर शहरी वास्तुकला के केंद्र बिंदु बनने लगे थे। तमिलनाडु में कांचिपुरम, तंजावुर (तंजौर), मदुरई और कुम्भकोणम् सबसे प्रसिद्ध मंदिर नगर हैं जहाँ आठवीं से बारहवीं शताब्दी के दौरान मंदिर की भूमिका केवल धार्मिक कार्यों तक ही सीमित नहीं रही। मंदिर प्रशासन के केंद्र बन गए जिनके नियंत्रण में बेशुमार जमीन होती थी।

गंगैकोंडचोलपुरम् मंदिर

उपसंहार

आज देश में बौद्ध, शैव, वैष्णव, शाक्त और मातृपूजक जैसे विभिन्न संप्रदायों एवं पंथों तथा इस्लाम जैसे धर्मों के अनेक स्मारक देखने को मिलते हैं। वे सब हमारी सांस्कृतिक विरासत के अभिन्न अंग हैं। हमारी सामाजिक संस्कृति विभिन्न विचारधाराओं का सुंदर संगम है, जो वास्तु स्थापत्य कला, मूर्तिकला और चित्रकला के नाना रूपों में अभिव्यक्त हुई है। इनका अध्ययन धार्मिक एवं सामाजिक दृष्टिकोणों से करने की आवश्यकता है। साथ ही सांस्कृतिक परंपरा के एकरेखीय चित्रण पर भी पुनरू विचार करना आवश्यक है, क्योंकि यह हमारे प्राचीन अतीत की वास्तविकताओं से हटकर है। उन दिनों भिन्न–भिन्न प्रकार के कार्य कलाकारों या कलाशिल्पियों की अलग–अलग श्रेणियों द्वारा किए जाते थे। जब किसी धार्मिक या राजनीतिक सत्ताधारी को कोई स्मारक, राजमहल या मंदिर बनवाना

होता था तो वह संबंधित कलाकारों या शिल्पियों की श्रेणी को काम सौंप देता था और वे कलाशिल्पी सौंपे गए कार्य को अपनी नूतन उद्भावनाओं के साथ संपन्न करने के लिए विभिन्न कार्यविधियां अपनाते थे। शैलीगत श्रेणियाँ शीघ्र अतिशीघ्र नहीं बदला करती थीं। वे लंबे समय तक अपरिवर्तित बनी रहती थीं, इसलिए भारतीय कला का अध्ययन करते समय, अध्येता को इन बहुत सी महत्वपूर्ण बातों को अपने ध्यान में रखना होगा। इस पुस्तक में प्राक् एवं आद्य–ऐतिहासिक काल से इस्लामिक काल तक के स्मारकों के बारे में एक परिचयात्मक रूपरेखा ही प्रस्तुत की गई है। इस मर्यादा को ध्यान में रखते हुए, विकास क्रम के स्वरूप को समझने के लिए बहुत कम उदाहरण दिए गए हैं और वे उदाहरण मात्र ही हैं और कुछ नहीं। लेकिन हमारा अभिप्राय यह नहीं है कि हम किसी भी ऐसे उदाहरण को अमान्य या अलग कर दें जो हमारे विचार से अधिक महत्वपूर्ण नहीं। बल्कि इस कार्य में योगदान करने वाले सभी लेखकों ने अपने–अपने विषयों का सांगोपांग चित्र प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास किया है। पुस्तक के सभी अध्यायों में देश के प्रत्येक क्षेत्र में प्रचलित कलाओं के विभिन्न रूपों की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है। मनुष्य ने जब पृथ्वी पर जन्म लिया था, तभी से मानव सभ्यता का आरंभ हो गया था। भारत भर में सर्वत्र पत्थर के औजारों के अनेक उदाहरण मिलते हैं। यही त्रि–आयामी रूप के साथ मानव की अंतरक्रिया का एकमात्र बचा हुआ उदाहरण है। प्रागैतिहासिक शैल–कला किसी जादुई कर्मकांड या धार्मिक विश्वास प्रणाली की देन है। प्रागैतिहासिक शैल–चित्र भारत में अनेक स्थानों पर पाए जाते हैं। इनके कुछ महत्वपूर्ण उल्लेखनीय स्थल हैं कृ भोपाल के पास स्थित भीमबेटका की गुफाएँ, उत्तर प्रदेश में स्थित मिर्जापुर की पहाड़ियाँ और कर्नाटक के बेल्लारी जिले की पहाड़ियाँ। भीमबेटका के शैल–चित्र चट्टानी आश्रय–स्थलों पर उत्कीर्णित और चित्रित किए गए हैं। आकृतियाँ साधारण रेखाओं के रूप में प्रस्तुत की गईं हैं। उन्हें सक्रिय रूप में यानी कोई क्रिया करते हुए दर्शाया गया है, उनके हाथ–पैर इकहरी रेखाओं से बनाए गए हैं। इन शैलाश्रयों में अधिकतर शिकार और नृत्य की क्रियाओं के दृश्य प्रस्तुत किए गए हैं। भीमबेटका का समय मध्य पाषाण काल (मेसोलिथिक पीरियड) यानी 11,000–3000 ई.पू. माना जाता है। ये चित्र, रेखाओं का सम्यक् प्रयोग करते हुए, दृश्यों को चित्र रूप में प्रस्तुत करने की मानवीय आकांक्षा के द्योतक हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि

[1] पोसेहल, ग्रेगरी एल. 2003। द इंडस सिविलाइज़ेशनरू ए कंटेम्पररी पर्सपेक्टिव। हम:

[2] अल्टा मीरा प्रेस जेन्सन, माइकल, गुंटर अर्बन, मैयर मुलॉय। 1996. सिंधु पर भूले हुए शहर।

[3] यूकेरू ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। राइट, रीटा पी। द एन्सिएंट इंडसरू अर्बनिज्म, इकोनॉमी एंड सोसाइटी। यूके कैम्ब्रिज

[4] यूनिवर्सिटी प्रेस। व्हीलर, सर मोर्टिमर। 1962. सिंधु सभ्यता। कैम्ब्रिजरू कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी

[5] प्रेस। केनोयर, जोनाथन मार्क, 1998। सिंधु घाटी सभ्यता के प्राचीन शहर। ऑक्सफोर्डरू

[6] अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ पाकिस्तान स्टडीज। ऑलचिन, ब्रिजेट, रेमंड ऑलचिन। 1982. भारत और पाकिस्तान में सभ्यता का उदय।

[7] कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस। रत्नागर, शेरेन। हड़प्पा को समझना नई दिल्ली: तूलिका प्रकाशन। परपोला, आस्को, 1994। इंडस स्क्रिप्ट को डिक्रिप्ट करना। यूकेरू कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

[8] व्हीलर, सर मोर्टिमर। 1962. सिंधु सभ्यता। कैम्ब्रिजरू कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी।

[9] प्रेस। केनोयर, जोनाथन मार्क। 1998. सिंधु घाटी सभ्यता के प्राचीन शहर। ऑक्सफोर्डरू

[10] अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ पाकिस्तान स्टडीज। ऑलचिन, ब्रिजेट, रेमंड ऑलचिन, 1982। भारत और पाकिस्तान में सभ्यता का उदय।

[11] कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस। रत्नागर, शेरिन। अंडरस्टैंडिंग हड़प्पा, नई दिल्लीरू तूलिका पब्लिशिंग। परपोला, आस्को, 1994। इंडस स्क्रिप्ट को डिक्रिप्ट करना। यूकेरू कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।